Bodhi-Path Year 2020 July Issue Volume 19 Page No 61-65

बुद्धकालीन सामाजिक, आर्थिक और भौगोलिक अवस्थाओं का उपमाओं द्वारा निरूपण

जय कृष्ण कृष्णम
शोध छात्र, पालि विभाग,
नव नालन्दा महाविहार, नालन्दा, बिहार
Email-Id: - jkkpp@gmail.com
Mob-No: - 9835512639

भरत मुनि ने अपनी रचना में कहा है– ''काव्य रचना में जो कुछ सादृष्य से उपमित किया जाय उसकी संज्ञा उपमा है। उपमा गुण एवं आकृति पर निर्भर करती है।[1] आचार्य मम्मट ने कहा है– साद्यर्म्य मुपमा भेद[2] अर्थात दो भिन्न पदार्थो के सादृष्य प्रतिपादन का नाम उपमा है। आचार्य मम्मट ने ''साधर्म्य'' शब्द का प्रयोग किया है– सादृष्य का नहीं। काव्य प्रकाष के अनेक टीकाकार साधर्म्य के समर्थक है और कतिपय इसे सादृष्य का ही पर्याय मानते है। सम्भवतः आचार्य मम्मट की दृष्टि में ''साधर्म्य'' एवं सादृष्य दो भिन्न चीजे है, जैसे अगर कहा जाय– अनेकार्थ सदृषः अर्थात यह इसके सदृष्य है। किन्तु तब प्रष्न उठता है कि वह किन धर्मो के कारण है? इसी का उत्तर आचार्य मम्मट ने उपमा की परिभाषा में दिया है– अर्थात दो वस्तुओं में सादृष्य साधारण धर्म के कारण है।

सामाजिक अवस्था :– पालि साहित्य में भगवान बुद्ध ने अपने सिद्धान्तो को 'उपमा' द्वारा स्पष्ट किया है। पालि साहित्य में जितनी भी उपमायें निबद्ध की गई है, उनमें बुद्धकालीन भारत के सामाजिक जीवन का जीवन्त चित्र उपस्थित होता है। भगवान बुद्ध ने जाति व्यवस्था का निर्धारण जन्म से नहीं कर्म को आधार माना है। प्राचीन भारतीय समाज चार वर्णों में विभाजित था, यथा– ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैष्य और शूद्र। इन चार वर्णों को जन्म के आधार पर उनकी पहचान की जाती थी, जबकि भवगान बुद्ध ने इन चार वर्णों का विभाजन कर्म के आधार पर किया था। भगवान बुद्ध का वचन है :–

न जटाहि न गोतेहि न जच्चा होति ब्राह्मणों।
यम्हि सच्च्"[य धम्मो च सो सुची सो च ब्राह्मणों[3]।।

अर्थात् न जटा से न गोत्र से न जन्म से ब्राह्मण होता है, जिसमें सत्य और धर्म है, वही व्यक्ति पवित्र और वही ब्राह्मण है। बुद्धकाल में ब्राह्मण वह था जो ब्रह्मा की प्राप्ति के लिए तप पूर्ण जीवन व्यतीत करता था। क्षत्रिय वह था, जो युद्ध कला में निस्णात हो, राज्य शासन व्यवस्था की सुदृढ रूप से संचालित करता था। वैष्य वह था जो अपने को वाणिज्य व्यवस्था में लगाए रहता था। शूद्र वह था जो तीनों की सेवा में निरत्त रहता था। वह परिभाषा यजुर्वेद की है। यह प्राचीन भारत की सामाजिक संचरणा थी, जिसे भगवान बुद्ध ने प्राचीन भारत की वर्णव्यवस्था के विपरीत समाज में क्षत्रिय को श्रेष्ठ कहा है। भगवान बुद्ध ने जाति–व्यवस्था को जन्माधीन नहीं कर्माधीन माना है। बौद्ध वाङ्.मय[4] में जन्म से जाति का निर्धारण नहीं होता। सुतनिपात[5] में दृष्टव्य है कि कोई जाति से नीच नहीं होता, न कोई जाति

से ब्राह्मण। कर्म से नीच होता है और कर्म से ब्राह्मण। ब्राह्मण के पास न पषु होते थे और न हिरण्य। स्वाध्याय ही उनका धनधान्य था और वे इस श्रेष्ठ धन की रक्षा करते थे[6]।

इससे स्पष्ट होता है कि बुद्धकाल में जाति व्यवस्था कर्माधीन थी। ब्राह्मणों के अतिरिक्त क्षत्रिय, वैष्य आदि विविध कर्म करने वाले लोगों का उल्लेख मिलता है। धम्मपद में ब्राह्मणों का स्वरूप को उपमा के माध्यम से व्यक्त किया गया है :–

यस्स रागो च दोसो च मानो मक्खो च पातिन्तो।
सासपोखि आरग्ग तमहं ब्रूमिं ब्राह्मणं[7]।।

अर्थात आरे के ऊपर सस्सो की भाँति जिसके चित्त से राग, द्वेष मान एवं डाह समाप्त हो गए है, उसे मैं ब्राह्मण कहता हूँ। इससे स्पस्ट होता है कि बुद्ध की दृष्टि में ब्राह्मण वही है, जो राग–द्वेष विवर्जित हो। बुद्धकाल में क्षत्रिय एक श्रेष्ठ और प्रतिष्ठित जाति थी। सामान्यतः क्षत्रिय राष्ट्र की सुरक्षा तथा राष्ट्र के संचालन में लगा रहता था। निम्न गाथा में क्षत्रिय का उल्लेख हुआ हैः–

युवा च दहरो चासि, पठसुप्पत्तिको सुसु।
वण्णरोहेन सम्पन्नो, जातिमा विय खन्तियो[8]।।

अर्थात :– आप नवयुवक हैं, प्रथम अवस्था प्राप्त तरूण है। आप रूप तथा शरीर की बनावट से क्षत्रिय जाति के जान पड़ते हैं। बुद्धकाल में क्षत्रिय प्रतिष्ठित जातियों में था।

आर्थिक अवस्था :– पालि साहित्य की उपमाओं में बुद्धकालीन भारत की आर्थिक अवस्था और व्यवसायिक उद्योगों का प्रकटीकरण होता है। कृषि कार्य और व्यवसाय के अतिरिक्त विविध षिल्पियों एवं उद्योग करने वाले लोगों के सम्बन्ध में उल्लेख मिलते हैं। व्यवसायिक वर्गों में स्वर्णकार, लोहार, कुम्भकार, इषुकार, रथकार, दत्तकार आदि की स्थिति उपमाओं से ज्ञात होती है।

कृषि और व्यवसाय राष्ट्र की रीढ़ मानी जाती है। उर्वर भूमि में जब किसम बीज बोता है, तो पैदावार अच्छी होती है तथा अनुर्वर भूमि में फसल अच्छी नहीं होती है। कृषक सम्पूर्ण राष्ट्र के लोगों को अन्न पैदाकर देता है। बुद्धकाल के समस्त कृषि के स्वरूप का अवबोध उपमाओं के माध्यम से प्राप्त होता है। उस समय किसान खलिहान में फसलों को खेतो से काटकर लाते थें और मैंज कर अन्न और पुआल को अलग रखते थे। इससे यह ज्ञात होता है कि बुद्धकाल में कृषक कार्य अपनी उन्नत अवस्था में थी।

सुत्तनिपात के कसि भारद्वाज सुत्त में कृषि के उपकरणों यथा :– फाल, नधना, छेकुनी, हल आदि का उल्लेख है। साथ ही उपमा के द्वारा बीज, वष्टि, जुआठ, हल आदि का उल्लेख निम्न उपमा में दृष्टिगत होता है।

''सद्धा बीजं तपो वुढि, प''''ा में युगनङ्गलं।

हिरि ईसा मनो योत्तं, सतिमे फालपाचनं।।[9]

अर्थात :– श्रद्धा बीज है, तप वृष्टि है, प्रज्ञा जुआठ और हल है, लज्जा हल का दण्ड है, मन नधना है, स्मृति मेरा फाल और छेकुनी है।

उपर्युक्त उपमा से यह ज्ञात होता है कि कृषि कार्य जब उपजाऊ भूमि में किया जाता था तो फसल अच्छी होती थी। फसल अच्छी होने के लिए वृष्टि भी अच्छी होनी चाहिए। वृष्टि के अभाव में फसल मारी जाती थी। कृषि के द्वारा शालि, यव, गन्ना की खेती[10] की उपमा चुल्लवग्ग में मिलती है।

बुद्धकाल में वाणिज्य व्यवसाय उन्नत अवस्था में थी। व्यापारी एक जनपद से दूसरे जनपद में जाकर वस्तुओं का क्रय–विक्रय करते थे। वाणिज्य की स्थिति कैसी थी इसका स्पष्ट उल्लेख हम उपमाओं के द्वारा पाते हैं :–

"तसितो बुद्धकं सीतं, महालाभं व वाणिजो।
छायं धम्मामितत्तो व तुरिता पष्वतमारूहं।।[11]

जैसे :– प्यासा मनुष्य शीतल जल की व्यापारी महालाभ की और गर्मी से पीड़ित छाया की इच्छा करते हैं, वैसे ही वे शीघ्र पर्वत पर चढ़ गए।

यहाँ तीन उपमाएँ दी गई है, किन्तु द्वितीय उपमा से वणिक के महालाभ की स्थिति का ज्ञात होता है। वणिक महालाभ के बिना वाणिज्य नहीं करता। व्यापार का एकमात्र उद्देष्य महालाभ पाना ही है।

भौगोलिक अवस्था :– सुत्तनिपात और जातक कथाओं में राष्ट्र के भौगोलिक अवस्थाओं के सम्बन्ध में प्रचुर सामग्री है। सुत्तनिपात के पांचवाँ पारायण वर्ग के वस्तुगाथा में बावरी जो कोषल नरेष प्रसेनजीत का पुरोहित था, वह अपने षिष्यों के साथ दक्षिणापथ में गोदावरी नदी के किनारे आश्रम बनाकर रहने लगा था। उस समय उत्तरापथ में भगवान के उपदेषों की उसने चर्चा सुनी और अपने सोलह षिष्यों को भगवान के पास भेजा। उनलोगों ने सर्वप्रथम श्रावस्ती आए जहाँ भगवान नहीं थे। फलतः वेलोग कुषीनगर, पावा, वज्जि, मल्ल होते हुए राजगृह आकर भगवान से मिले थे। इन लोगों ने दक्षिणापथ से चलकर उत्तरापथ के प्रमुख मार्गो, जनपदों की सीमाएँ आदि का विवेचन किया है। जिससे बुद्धकालीन उत्तरापथ के भौगोलिक सीमाओं का ज्ञान होता है। साथ ही साथ आन्ध्रप्रदेषो के अष्वक और अलग दोनों राज्यों के मध्य गोदावरी नदी के किनारे वास करते थे। फलतः बुद्धकालीन मज्झिम देष के जनपदों का भौगोलिक अवस्थाओं की जानकारी हमें सुत्तनिपात के वत्थुगाथा से मिलती है।[12]

जातक कथाओं में भौगोलिक विवरण भी दिए गए हैं। गान्धार और कम्बोज से कलिंग, आन्ध्रप्रदेष, कष्मीर तथा हिमालय प्रदेष से अवन्ती एवं अष्मक (वर्तमान खानदेष) आदि तक के देषों का जातक कथाओं में उल्लेख मिलता है। लंका और जावा के सम्बन्ध में भी उस समय पर्याप्त ज्ञान था। तत्कालीन भारत के व्यापारी लोग बावेरू राष्ट्र[13] तक व्यापार करने जानते

थे। महाबेसान्तर जातक[14] में षिविराष्ट्र का उल्लेख है। महाजनक जातक में चम्पा जनपद सुवर्णभूमि व्यापार करने के लिए जाते थे।

इस प्रकार हम देखते हैं कि सम्पूर्ण पालि साहित्य में भगवान बुद्ध के उपदेष को सहज और सरस बनाने के लिए एवं आम जन तक धर्म को पहुचाँने के लिए बहुत सारे उपमाओं द्वारा अपने उपदेष को समझाने का प्रयास किया गया है। ताकि बुद्ध की धर्म उपदेष एवं उनके षिक्षा सर्वसाधारण जन भी आत्मसात् कर सके। पालि साहित्य का धम्मपद ग्रन्थ के लगभग सभी गाथाओं को बहुत ही सुन्दर एवं सरल उपमाओं द्वारा बुद्ध ने तत्काल जनमानस को समझाने का प्रयास किया था। भगवान बुद्ध ने धम्मपद के प्रथम गाथा जो मनुष्य को सीधे मन पर प्रभाव डालता है। यह गाथा इस प्रकार है :–

मनोपुब्ब|मा धम्मा मनोसेट्ठा मनोमया।
मनसा च पदुट्ठेन भासति वा करोतिवा।
ततो नं दुक्खमन्वेति चक्क व वहतोपदं।।[15]

अर्थात :– सभी धर्म (कुषल–अकुषल) पहले मन में उत्पन्न होते हैं, म नही मुख्य है, वे मनोमय है। जब आदमी मलिन (दुषित) मन से बोलता है, या कार्य करता है, तब दुक्ख उसके पीछे–पीछे वैसे ही चलता है, जैसे गाड़ी के पहिए बैल के पीछे–पीछे। यहाँ दुक्ख को गाड़ी की पहिए की उपमा देकर मन को दुषित होने से रोकने का प्रयास किया गया है।

इस प्रकार सम्पूर्ण पालि साहित्य में उपमाओं का भण्डार है। उपमा से मनुष्य के भावात्मक एवं मनोवैज्ञानिक स्थिति का स्पष्ट रूपायन होता है। भगवान बुद्ध उपमा की ही भाषा से सूक्ष्म तथा दुरूह से दुरूह तत्वो का प्रकाषन करते थे तथा वह व्यक्ति के मन को प्रभावित करता था। बौद्ध दर्षन में मन को चित्त का पर्यायवाची कहा है। मानव की मन की वृत्तियाँ विविध क्षेत्रों में प्रसारित रहती है। चित्त (माइन्ड) मन (रीजन) विज्ञान (कॉन्ससनेस) ये नाम एक अर्थ के वाचक है, जो संचय करता है, वह चित्त है। यही मन है, क्योंकि यह मनन करता है (मनुते) यही विज्ञान है, क्योंकि वह अपने आलम्बन को जानता है।

उपमा का प्रभाव जब मन पर पड़ता है तो वह सहज की समझ में आ जाती है। भदन्त नागसेन ने प्रचण्ड राजा मिलिन्द को ऐसी–ऐसी उपमाओं का नियोजन किए थे, जो मिलिन्द के मन प्रभावित करता था तथा मिलिन्द काफी प्रसन्न होकर भदन्त नागसेन के उत्तर से सन्तुष्ट हो जाता था। राजा मिलिन्द भदन्त नागसेन से प्रष्न करते है :– भन्ते! दूसरे मत वाले कहते हैं कि यदि बुद्ध अपनी पूजा स्वीकार करते हैं तो उन्होंने निर्वाण नहीं पाया। अब भी आवष्यक इस संसार में रहते है और उनकी स्थिति इस संसार में कहीं न कहीं होती है। यदि ऐसी बात है तो वे केवल एक साधारण जीव हुए और उनके प्रति की गई पूजाएँ व्यर्थ है।

भदन्त नागसेन का जबाब है :– महाराज! भगवान निर्वाण[16] प्राप्त कर चुके हैं। भगवान किसी पूजा को स्वीकार या अस्वीकार नहीं करते। बोधिवृक्ष के नीचे ही भगवान बुद्ध इस प्रष्न से दूर हो गए थे। अब संसार से सर्वथा मोह त्याग कर निर्वाण पा लेने पर तो कहना ही क्या

है। संसार में अपनी न रखने वाले बुद्ध देवता और मनुष्य दोनों से पूजा पाकर भी न उसे स्वीकार करते हैं और न अस्वीकार बुद्धों का ऐसा ही स्वभाव है।

भदन्त नागसेन राजा मिलिन्द को समझाने के लिए अनेको उपमाओं का प्रयोग किया है। जैसे :– आँधी, ढोल, महापृथ्वी, पेट की कीड़ो, रोग आदि की उपमा देकर राजा मिलिन्द के मन को प्रभावित किया। फलतः राजा मिलिन्द भदन्त नागसेन की उपमाओं से उनके मन पर गहरा प्रभाव पड़ा और भदन्त नागसेन के उत्तर से वह सन्तुष्ट हुआ और बौद्ध धर्म में प्रवज्जित हो गया था।

निष्कर्ष :– पालि साहित्य में भगवान बुद्ध के गहन दार्षनिक सिद्धान्त सामान्यजनो के लिए ग्राहन्य नहीं हो पाते थे, उसे सहगत बोध्य बनाने के लिए तथा अभिव्यक्ति में स्पष्टता लाने के लिए वे उपमाओं की योजना करते थे। उनकी उपमा योजना इतनी स्पष्ट एवं सरल होती थी कि श्रोता सहजतः तथागत के मूलवक्तव्य के सार तत्व को ग्रहण कर लेते थे।

इस प्रकार हम देखते हैं कि बुद्धकालीन सामाजिक, आर्थिक एवं भौगोलिक अवस्थाओं को उपमाओं द्वारा देखने एवं समझाने का प्रयास किया गया था।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :–

1. नाट्य शास्त्र, 14–44, आचार्य भरत मुनि।
2. काव्य प्रकाष, 125
3. धम्मपद, गाथा संख्या– 393
4. दीघनिकाय भाग– 1, अम्बट्ठ सुत्त, पृ0 सं0– 105
5. सुत्तनिपात, वसल सुत्त, गाथा सं0– 21, पृ0– 34
6. सुत्तनिपात, ब्राह्मण धम्मिक सुत्त, गा0 सं0– 2, पृ0– 2, 73
7. धम्मपद, ब्राह्मण वग्ग, गा0 सं0– 407
8. सुत्तनिपात, पव’’’ा सुत्त, गा0 सं0– 16 पृ0– 104
9. सुत्तनिपात, कसिभारद्वाज सुत्त, गा0 सं0– 2, पृ0– 18
10. चूल्लवग्ग, पृ0– 317
11. सुत्तनिपात, परायण वग्ग, वत्थु गा0 सं0– 39, पृ0– 260
12. सुत्तनिपात परायण वग्ग, पृ0– 255
13. जातक भाग– 3, बावेरू जातक, पृ0– 399, हिनी अनुवादक– कौषल्यायण।
14. वहीं, भाग– 6, महावेसन्तर जातक, पृ0– 483, हिन्दी अनुवाद– कौषल्याण
15. धम्मपद, गा0 सं0– 1
16. मिलिन्द प्रष्न, महावग्गो, पृ0– 120, सम्पादक– शास्त्री।